

ग्रीन थाई करी

अस्फिया



जर्मनी में रात के 10 बज रहे थे और इंडिया में सुबह के ढाई। कुछ दो घण्टे पहले बहुत मेहनत करके मैंने खुद को अपने हॉस्टल से बस्ते जैसा उठाया था। बहुत बोर होने के बाद मैंने तय किया था कि मैं शहर के चौक बाज़ार में कुछ समय बिताऊँगी। जब तापमान तीन डिग्री से कम हो और आपके पास हीटर हो, तो कमरे से बाहर जाने की कल्पना कोई सच्चा जर्मन ही कर सकता था।

खैर, मैंने खुद को अँधेरा होने से पहले से मनाना शुरू कर दिया था कि मैं उस दिन बाहर निकलूँगी और थोड़ा शहर घूमकर आऊँगी।

पराए देश में ज़िन्दगी के रंगों की खोज एक बेहद जटिल काम है।

मैंने सबसे पहले अपना सफ़ेद रंग वाला बॉडी वॉर्मर पहना, उसके ऊपर जींस और स्वेटर, और फिर उसके ऊपर कड़कड़ाती ठण्ड से बचने के लिए एक जैकेट। मुझे याद है, जब मैं

पहली बार मसूरी गई थी, ठण्ड के मारे केम्पटी फॉल के बगल में बैठ के रोने लगी थी। ठण्ड बर्दाश्त कर पाना और उसमें अपने दिमाग का इस्तेमाल कर पाना, मुझे आठ साल बाद भी उतना ही मुश्किल लग रहा था।

बाहर निकलने के लिए तैयार होते हुए, मैं अपने दिमाग में योजना भी बनाती जा रही थी कि चौक बाज़ार में क्या करूँगी। मेरा प्लान था कि मैं अपने हॉस्टल के पास वाले स्टेशन से ट्रेम पकड़ के डोर्म प्लत्ज़ जाऊँगी और वहाँ से चलकर अपने पसन्दीदा डोनर कबाब की दुकान, इब्रीस जाऊँगी।

जर्मनी आए मुझे लगभग पाँच हफ्ते हो चुके थे। मैं थुरिनजिया राज्य की सरकार द्वारा बनाए गए स्टूडेंट रेज़िडेन्स में तीन अन्य औरतों के साथ रह रही थी। अब हमारी ठीक-ठाक दोस्ती हो चुकी थी पर शुरुआती दिनों में चीज़ें काफी सुस्त थीं। हम हफ्ते में एक बार - जिस दिन सबके प्लान सेट हो जाएँ, साथ बैठकर कुछ खाते या टीवी देखते थे। बाकी के दिनों में बस हल्का हैलो-हाय करते-“आज कितनी ठण्ड है; अरे! धूप ही नहीं निकली; हवा बहुत तेज़ है; रशिया ने यूक्रेन पर बम फेंक दिया; धूप कब आएगी...”। मैं तब तक किसी के दोस्ती के दायरे में नहीं थी।

अपने शुरुआती दिनों में मैंने बहुत समय जर्मनी के सोशल इंटरैक्शन के नियमों को समझने में लगाया था -

कब किसे फोन कर सकते हैं, कब कोई दोस्त बनता है, दोस्तों से मिलने का अपॉइंटमेंट कब लेना ठीक होगा, और कितना मिला जाए या बात की जाए कि बाहर देश में सहजता बनी रहे। नए देश की नई अपेक्षाएँ थीं मुझ पर।

मैं डोर्म प्लत्ज़ पहुँचने तक खुद के निर्णय को कोसने लगी थी, हड्डियों के साथ-साथ मेरी रूह भी काँप रही थी। मैं सोच रही थी कि ठण्ड से मेरा क्या बैर? उस दिन के दो-तीन महीने बाद मुझे एक दोस्त के दोस्त ने टोका कि जर्मनी की ठण्ड से बचने के लिए मैं जो जैकेट पहनकर घूमती हूँ, वो दरसल बारिश की जैकेट है। जर्मनी में एक कहावत है- “es gibt kein schlechtes Wetter, nur falsche Kleidung”, मतलब कि बाहर ज़्यादा ठण्ड नहीं होती, बस हमने ढंग के कपड़े नहीं पहने होते। उस दिन के बाद मुझे अन्दाज़ा लगा की यह बैर नहीं, जानकारी का अभाव था। वो जैकेट मैंने अपने एक दोस्त से उधार माँगी थी। भोपाल के इज्तिमे से ली हुई जैकेट जर्मनी में बारिश की जैकेट निकली, ठण्ड की नहीं!

हवा वाली तेज़ ठण्ड की जैकेट अलग होती है, बारिश-ठण्ड की अलग, और पतझड़ वाली ठण्ड की जैकेट अलग।

खैर, तब तक मैंने उसी जैकेट में अपने शुरुआती बेहद मुश्किल और कन्फ्यूज़िंग दिन बिता दिए थे। डोर्म

प्लत्ज़ से इब्रीस डोनर कबाब की दुकान ज़्यादा दूर नहीं थी, मैं 15 किमी/घण्टा की हवा से लड़ते हुए तकरीबन पन्द्रह मिनट में वहाँ पहुँची।

मेरा सारा ध्यान यही सोचने में लगा हुआ था कि मैं आज क्या खाऊँगी। मैं जैसे-जैसे आगे बढ़ती, बेचैनी भी बढ़ती गई। मुझे बात करके ऑर्डर देना था, जर्मन में - “eine doner kebab”, वो भी अकेले। मैं इससे पहले सिर्फ अपनी फ्लेटमेट के साथ वहाँ आई थी और उसने ही मेरा ऑर्डर दिया था।

एरफर्ट मध्य जर्मनी का बहुत ही खूबसूरत शहर है। कहते हैं, दूसरे विश्व युद्ध में जो चन्द शहर तबाह होने से बच गए थे, उनमें से एक एरफर्ट भी था। रंग-बिरंगे कार्टून वाले घर, जैसे मैं बचपन में बनाती थी, वहाँ हर जगह देखने को मिलते। बस, वहाँ अँग्रेज़ी बोलने और समझने वाले लोग मुझे सिर्फ यूनिवर्सिटी में ही टकराए थे।

इब्रीस में यह अच्छा था कि उन्होंने खाने की हर डिश को एक कोड दिया था, जैसे मेरा पसन्दीदा हलुमी वाला डोनर S8 था। इस बार भी मैं S8 ही खाना चाहती थी।

काउंटर पर दो आदमी काम कर रहे थे और आपस में अरबी में बात कर रहे थे। मैं लाइन में कुछ 5-7 मिनट खड़ी रही, जैसे-जैसे लाइन छोटी होती जाती, मैं अपने डायलॉग की लाइन मन में दुहराती रहती,

“eine S8, yogurt sauce”। बीच-बीच में यह सोचकर भी बेचैन होती कि अगर कुछ और बात करनी पड़ी तो मैं क्या करूँगी।

मेरा नम्बर आने पर उन दो अरबी आदमियों में से एक ने मुझ से जर्मन में पूछा, “तुम्हें क्या चाहिए?” - ऐसा मैंने अनुमान लगाया। मैंने इशारे से बोर्ड पर लिखे S8 की तरफ उँगली दिखाई और सिर्फ S8 बोला। फिर उन्होंने कुछ और पूछा और मैंने लपककर बोला, “yogurt sauce.” उसके बाद मुझे कुछ बोले बिना वो मेरे पीछे लगे एक आदमी से जर्मन में बात करने लगे।

अपने ऑर्डर का इन्तज़ार करते हुए मेरी नज़रें हमेशा की तरह दुकान की टाइल्स को निहार रही थीं। नीले-सफेद रंग की बेहद खूबसूरत टाइल्स उन्होंने अपनी दीवारों पर एक मोटी-सी पट्टी में लगा रखी थीं। ऐसी टाइल जैसी मस्जिद के गुम्बद में होती हैं। उनको निहारते हुए मैं वक्त काटने लगी। मेरा प्लान डोनर पैक करवा के हॉस्टल जाकर कुछ देखते हुए खाने का था।

पर फिर मेरी नज़र उनके फ्रिज पर पड़ी, मैंने तय किया कि मैं आज वहीं बैठ के फैंटा कोल्ड ड्रिंक पीते-पीते डोनर खाऊँगी। उस वक्त इस ख्याल ने मुझे बेहद खुशी दी। फ्रिज की तरफ काउंटर पर एक दूसरा आदमी था, मैंने फ्रिज की तरफ इशारा करते हुए उससे पूछा, “हाउ

मच?" आदमी समझदार था। उसने बिना बोले मुझे दो उँगलियाँ दिखाईं। मैं एक मिनी डिसिजन मेकिंग प्रॉसेस में गई - सब मिलाकर कुल कुछ 12.80 यूरो, जो तकरीबन एक हज़ार रुपए के बराबर थे।

शुरु-शुरु में मैं खुद को ऐसे कैलकुलेशन से रोक नहीं पाती थी। बाद में मैंने रुपए में सोचना ही बन्द कर दिया था, मैं यूरो में ही सोचने की कोशिश करती थी। निर्णय लेते हुए लगा कि अगर भोपाल में होती तो इडली-वड़ा, लिट्टी-चोखा खाकर मुश्किल से 150 रुपए में सब निपटा देती। दिनभर में ये 1540वीं बार घर की याद आई होगी।

मैंने उस आदमी को इशारे से बोला - एक चाहिए, उसने भी इशारे से कहा - खोल के निकाल लो। मैंने बोतल निकाली और टेबल की तरफ बढ़ी, उस आदमी ने बोला, "इंडीयन?", मैंने पलटकर बोला, "येस", उसने बोला, "शाहरुख खान", मैंने बेहद खुश होकर बोला, "येस।" उसके बाद मैंने जो शब्द उसके मुँह से सुने, मैं एकदम चौंक गई, "आप कैसे हो?"

मेरी आँखें एकदम फैल गईं।

"बहुत अच्छी, आप कैसे हैं?" इसका जवाब उसने सिर्फ शाहरुख खान की फिल्मों के नाम से दिया। मैंने उससे इंग्लिश में बात करने की कोशिश की पर नाकाम रही। यह वाक्या मेरे अभी तक के दिन की महत्वपूर्ण हाइलाइट थी।

मेरा ऑर्डर आ चुका था। उन्हें एक स्माइल देकर मैं अपनी टेबल पर जा बैठी और डोनर कबाब जल्दी-जल्दी कोल्ड ड्रिंक के साथ कुछ ही मिनटों में निपटा दिया।

* * *

मैं अब इब्रीस से बाहर निकल चुकी थी और चलते-चलते डोर्म प्लत्ज़ की तरफ जा रही थी। ट्रेम स्टेशन पहुँची तो चौराहे की घड़ी में 10 बज चुके थे। ट्रेम कुछ 15 मिनट में आने वाली थी, चलते-चलते मैं थक गई थी तो स्टेशन की बेंच पर बैठ गई। मुझे बैठे कुछ ही वक्त गुज़रा होगा कि दो जर्मन आदमी मेरे पास आए और मुझसे बात करने लगे। मैंने उन्हें समझने और जवाब देने की कोशिश भी नहीं की और बस "नो दाउच" (नो जर्मन) बोलकर बैठी रही। पर वो दोनों फिर भी बोलते जा रहे थे। मुझे लगा कुछ ज़रूरी बात कह रहे होंगे, तो मैंने फिर उनकी तरफ देखते हुए कहा, "ओन्ली इंग्लिश।"

उनके शरीर का हावभाव कुछ ज़हीन नहीं था। मैंने अनुमान लगाना शुरु कर दिया था कि उन दोनों ने काफी शराब पी रखी होगी। ऐसे हालात में मेरा मुख्य दाव था जम जाना, फ्लाइट और फाइट के बीच का फ्रीज़ रिस्पॉन्स।

जब तक मैं मन में चिल्लाती रही, "उठो, हटो वहाँ से", एक औरत ने फर्रटिदार जर्मन में उन दोनों आदमियों को कसकर डाँट लगाई।



उस औरत और उन दो शराब पीए हुए आदमियों के बीच कुछ सेकण्ड तक गहमा-गहमी चलती रही। वो दोनों आदमी इस औरत पर चिल्लाते और यह औरत डाँटकर उनको भागने का इशारा करती। मैं बैठी यह सब देख रही थी कि तभी उस औरत ने मुझे अपने साथ चलने को कहा और स्टेशन के दूसरे छोर पर ले गई। उसे अँग्रेज़ी आती थी।

“मैं शर्मिन्दा हूँ कि ऐसा हुआ, आइ एम सो सॉरी।”

“अरे नहीं-नहीं, तुम्हारा बहुत शुक्रिया, मैं काफी डर गई थी।”

“वो जाहिल लोग तुम्हें परेशान

कर रहे थे, मैं ऐसी चीज़ें बिलकुल बर्दाश्त नहीं कर सकती।”

“मुझे समझ में ही नहीं आया कि वो लोग क्या कहना चाह रहे थे, नहीं तो मैं वहाँ से हट जाती।”

“वो टुच्ची बातें कर रहे थे। ये लोग ऐसे ही करते हैं। मैं दूर से देख रही थी कि वो क्या कर रहे हैं, फिर मुझसे रुका नहीं गया।”

“थैंक यू सो मच।”

जिस तरह से उस औरत ने मुझे गुण्डों से बचाया था, वो मेरी हीरो थी।

मुझे जो ट्रैम पकड़नी थी, उसे भी वही ट्रैम पकड़नी थी, यह जानकर

मुझे अन्दर-ही-अन्दर बेहद सुकून मिला। ऐसा लगा कि अब मैं उसके साथ हूँ तो मुझे कुछ नहीं होगा, मैं सेफ हूँ। ट्रेम और शॉक जकड़ा मेरा बदन अब थोड़ा रिलैक्स हो रहा था।

“अभी इतनी रात भी नहीं हुई है, पर ठण्ड की वजह से सब खूब सुनसान हो जाता है।”

“हाँ, इसीलिए मैं सोच रही थी कि ट्रेम से हॉस्टल जाऊँ।”

“इन लोगों से शराब पचती नहीं।”

मैंने मन-ही-मन सोचा, काहे का यूरोप, काहे का विकसित देश।

“क्या तुम इंडिया से हो?”

“हाँ, और तुम?”

“मैं डच हूँ, मेरी माँ जर्मन हैं इसलिए मैं जर्मन समझ लेती हूँ और काम भर का बोल लेती हूँ।”

“पर तुमने उन लोगों को क्या मस्त फटकार लगाई, बचा लिया मुझे, थैंक यू।”

ट्रेम आ चुकी थी, उसे मेरे स्टेशन से दो स्टेशन आगे जाना था। ट्रेम में जहाँ सीट फोल्ड हो जाती है, हम वहाँ पहुँचे। मैंने एक सीट नीचे की और बैठ गई, उसने

अपनी व्हीलचेयर मेरे बगल में सेट कर ली। हम लगभग पन्द्रह मिनट साथ थे और उस बीच हम नॉन-स्टॉप बतियाते रहे।

* * *

मुझे पता चला कि मेरी ही तरह वह भी एरफर्ट कुछ ही महीनों के लिए आई है। वो वहाँ बास्केट बॉल के नेशनल्स की प्रैक्टिस करने आई थी। जब उसने मुझे यह बताया तो मेरे मन में बहुत तेज़ कुलमुली हुई, बास्केट बॉल और व्हीलचेयर! मेरे सामने खूब सारे सवाल नाचने लगे। पर मैंने खुद को रोका। सब कुछ पहली बार में बोलना या पूछना



फोटो: अस्मिका

अशिष्टता हो सकती थी, ऐसा मैंने सोचा, और सेंसिटिव होना भी तो कुछ होता है। पर मैंने तय कर लिया था कि मैं उससे और मिलना चाहती थी।

क्योंकि वो एरफर्ट में तीन महीने के लिए ही थी, उसके जान-पहचान वाले वहाँ कम थे, मेरी तरह।

मेरा स्टेशन आने ही वाला था। उसने मेरा व्हाट्सऐप नम्बर माँगा और हमने तय किया कि आने वाले वीकेंड पर हम साथ में खाना खाने जाएँगे। मैं उसका नम्बर सेव करते हुए अपने स्टेशन - बाउमाशस्ट्रस्से पर उतरी, फोन में उसका नाम लिखा - जित्सके।

मैं मन में लड़खू फोड़ते हुए अपने हॉस्टल पहुँची। मैं बेहद खुश थी कि आने वाले वीकेंड मेरे पास भी एक प्लान था, मुझे किसी ने इन्वाइट किया था।

कपड़े वगैरह बदलकर मैंने रूम हीटर चालू ही किया था कि जित्सके का मैसेज आया, “मैं अपने घर पहुँच गई हूँ, क्या तुम भी आराम-से अपने हॉस्टल पहुँच गई?”

“ओह! बढ़िया तुम आराम-से पहुँच गई। मैं भी अपने घर आराम-से आ गई हूँ। आज के लिए बहुत शुक्रिया, तुमने जान बचा ली। गुड नाइट।”

“तुम्हें मुझे थैंक यू बोलने की ज़रूरत नहीं, मैंने वही किया जो मुझे करना था। स्वीट ड्रीम्स।”

* * *

वो दिन आ गया जब मुझे जित्सके से मिलना था। शाम हुई, मैंने कपड़े लादे और ठीक सात बजे पहुँच गई - कॉग्निटो होटल। हमें कहाँ मिलना है और कितने बजे, सुबह ही व्हाट्सऐप पर बात कर ली थी।

कॉग्निटो एक थाई खाना परोसने वाली जगह थी। मैं सोचकर आई थी कि मिलने-मिलाने में पैसे खर्च होते ही हैं तो ज़्यादा टेंशन नहीं लूँगी। लोग बोलते हैं न ‘पैसा हाथ का मैल है’ पर मुझे तो पैसा बदन का खून लगता है।

जित्सके पहले ही वहाँ पहुँच चुकी थी। मैंने फोन में टाइम देखा, सात बजकर तीन मिनट हो रहे थे। हमने हाथ मिलाया, एक-दो मिनट अपने हाल-चाल और मौसम की बात की और उसके बाद यह चयन करना शुरू किया कि हम कौन-सी टेबल ले सकते हैं। मैंने देखा कि इतनी ठण्ड में भी बाहर की टेबलों पर कुछ लोग बैठे थे, अपनी कुल्फी जमवाने के लिए। सिहरन भरते हुए मैंने दूसरी तरफ नज़र दौड़ाई तो एक टेबल दिखी जो अन्दर थी पर वहाँ से बाहर की सड़क और लोग दिख रहे थे। मैंने जित्सके की तरफ देखा, वो भी उसी टेबल को देख रही थी।

हमने काउंटर पर ऑर्डर दिया - दो ग्रीन थाई करी बाउल। जब तक वो तैयार हो रहे थे, ड्रिंक्स वाले

काउंटर पर मैंने गुडहल के फूल की चाय और जित्सके ने हॉट चॉकलेट जैसा कुछ ऑर्डर किया।

एरफर्ट में खाने की सभी जगहों पर जर्मन भाषा में मेन्यू होता है, तो मैं कुछ शब्द पकड़कर बड़ी सावधानी से ऑर्डर देती थी। कई बार ऐसा हुआ कि कल्पना कुछ करती और आता खाने को कुछ और ही। इसी सिलसिले में मैंने एक बार एक खूब तला हुआ ब्री चीज़ और आलू खाया था, वो भी 800 रुपए देकर!

मैं एक बार में अपनी ड्रिंक और खाना लेकर टेबल पर जा पहुँची, जित्सके ने दो चक्कर लगाए। मैंने उसके मदद माँगने का इन्तज़ार किया। उसने खुद से दो कुर्सियाँ हटाई और अपने लिए जगह बनाई।

फिर शुरू हुआ खाना और बातों का सिलसिला।

सबसे पहले हमने जानना चाहा कि हम दुनिया में कहाँ से हैं - माने शहर या इलाका। यह समझने के लिए हमने एक-दूसरे के घर गूगल मैप में देखे। उसने एम्सटर्डम के पास मुझे इवॉले दिखाया जहाँ वो बड़ी हुई थी। मैंने दिल्ली से ज़ूम करते हुए उसे भोपाल दिखाया, जहाँ मैं कुछ साल से रह रही हूँ। न ही उसे भोपाल के बारे में पता था और न ही मुझे इवॉले के बारे में, पर हमें उस दिन पता चला कि दोनों ही जगहें नदी और झीलों से भरी हैं। उस एक पल

हमने अपने-अपने घरों को याद किया।

मुझे यह समझ आया कि हम दोनों ही एक-दूसरे के बारे में जानने के लिए काफी उत्साहित थे। हमारी दुनिया इतनी अलग थी कि हर बात में हमें मज़ा आ रहा था। एक-दूसरे के परिवार के बारे में, काम के बारे में, रुचियों के बारे में - हमें एक-दूसरे के बारे में सब कुछ जानना था।

* * *

बातों-बातों में जित्सके ने मुझे बताया कि 2022 के Paralympics में उनकी टीम ने 'वीमेन व्हीलचेयर बास्केट बॉल' में गोल्ड मेडल जीता है। यह सुनकर मैं दंग रह गई। मुझे लगा कि किसी एक व्यक्ति से जितना इम्प्रेस हुआ जा सकता है, मैं जित्सके से उतना इम्प्रेस हो चुकी हूँ या शायद उससे भी ज़्यादा। मैं ओलम्पिक के गोल्ड मेडलिस्ट के साथ बैठी थी, उसने इतनी सहजता से मुझे यह बात बताई जैसे कोई आम बात हो।

मेरे दिमाग में सब रिवाइंड होने लगा - जित्सके ने मुझे गुण्डों से बचाया, मुझसे दोस्ती की, अपना नम्बर दिया, मुझे डिनर पर बुलाया और वह एक विश्व स्तरीय महिला खिलाड़ी है।

अब मैंने चीज़ों को सच मानना बन्द कर दिया था। क्या हो रहा था मेरे साथ - क्या ऐसा मुमकिन था? मैं मन ही मन बेहद खुश थी - यह सदी में एक बार होने वाली घटना थी। मैंने



सोच लिया था कि मैं इसके बारे में एक दिन सबको बताऊँगी। मुझे नहीं पता था कि कहानी अभी खत्म नहीं हुई थी।

मुझे ऐसा लग रहा था कि मैं जो भी बोलूँगी, छोटा और गैरज़रूरी ही सुनाई देगा पर मैंने अपना संयम बनाए रखा और उससे पूछा कि वो आजकल किस मैच की तैयारी कर रही थी।

पता है, उसने क्या कहा!

उसने बताया कि वो हाल ही में International Paralympics Committee, IPC की चेयरपर्सन बनी है तो थोड़ा उसी में व्यस्त है। मैं ओलम्पिक्स की चेयरपर्सन के साथ डिनर कर रही थी। क्या यह वही समय था जब मुझे खुद को पिंच करके देखना था कि मैं सपना तो नहीं देख रही? मैंने पूरी कोशिश की कि मैं चौंकी हुई न रहूँ

पर नाकाम रही। मेरी आँखों में सेलिब्रिटी से मिलने वाली चमक भरने लगी थी, मैं बहुत कुछ जानने के लिए उत्सुक थी और अपने ईगो को कम करना चाहती थी। शायद जित्सके यह बात समझने लगी थी, उसने मेरे द्वारा उसके ऊपर चढ़ाया हुआ अटेंशन अब मेरे ऊपर डालने की कोशिश की।

उसने मुझसे पूछा कि मैं कैसे कूड़े और औरतों के बीच के रिश्ते को साथ में देखती हूँ। मेरा रिसर्च टॉपिक उसके लिए काफी नया और दिलचस्प था। मैं अपने बारे में कुछ भी बात नहीं करना चाहती थी, पर फिर भी क्योंकि उसने पूछा था तो मैंने अपने रिसर्च के बारे में ऐसे बताया जैसे कि हर कोई यही काम करता हो।

“हाँ, औरतें समूहों में मिलकर कूड़ा बीनने जाती हैं और इन समूहों में दोस्ती और रिश्ते एक प्रमुख चीज़ है। कई स्कॉलर्स ने ऐसे समूहों की स्टडी की है।”

“ओह, मुझे नहीं पता था कि इसपर काफी रिसर्च की जा चुकी है।”

“सॉरी, मेरा वो मतलब नहीं था, मतलब एकेडेमिया में इसपर चर्चाएँ होती रहती हैं।”

मैंने मज़ाक करते हुए उससे कहा, “पर एकेडेमिया में IPC के चैयरपर्सन के बारे में ज़्यादा चर्चा मैंने नहीं सुनी।”

वो हँसने लगी।

“IPC काफी जटिल जगह है। इतनी सारी ज़रूरी बातें होती हैं पर कई बार हम एक ही मुद्दे पर अटक जाते हैं, जैसे कि आजकल यह बात चल रही है कि इस साल रूस को पैरालम्पिक गेम्स में शामिल करना है या नहीं।”

“ओह येस, यह तो काफी जटिल मामला है।”

“हाँ, कुछ लोगों का कहना है कि रूस का यूक्रेन को लेकर जिस तरह का रवैया है, हमें उसका बहिष्कार करना चाहिए, पर हमारे खेलों का तो मकसद ही है सभी देशों को साथ में लाना। मैं इसी असमंजस में हूँ आजकल।”

“बाप रे, यह तो बहुत ही कॉम्प्लिकेटेड सिचुएशन है। ऑल द वेरी बेस्ट।”

“शुक्रिया। देखो क्या होता है...”

“तुम्हें इन औरतों के समूह में कैसे रुचि हुई? मैंने पहले कभी भी इस तरह की पेचीदगी के बारे में नहीं सोचा, क्वाइट इंट्रेस्टिंग। तुम्हें तो बहुत मेहनत करनी पड़ती होगी।”

“हाँ, मैं ऐसी जगह से हूँ जहाँ इस तरह की रियलिटी को नज़रअन्दाज़ करना शायद मुश्किल है और इसके अलावा मैंने सोशल वर्क की पढ़ाई की है तो मेरी इन्ट्रियाँ की ऐसी ट्रेनिंग ही है। पर अच्छी बात यह है कि मुझे रूस से जुड़े निर्णय नहीं लेने होते।”

इस बात पर हम ठहाके लगाकर हँसने लगे - यह सोचकर कि दुनिया कितनी विचित्र है और शायद उसे ह्यूमर ही बचा सकती है।

मुझे समझ में आया कि हम दोनों जो काम कर रहे थे वो हमारे लिए आम था पर सामने वाले के लिए काफी रुचिकर और सोचने के परे था। पर हम दो औरतों का मिलना और एक-दूसरे की दुनिया से जुड़ना

एक एक्सपेरिमेंट जैसा ही था।

दुनिया में खेलों का महाराजा - ओलम्पिक्स - जो कि सिर्फ एक है, उसमें जो उनकी एकमात्र शीर्ष कमेटी है, उसकी एकमात्र चेयरपर्सन मेरे साथ ग्रीन थाई करी खा रही थी - जित्सके वाइसर, वर्ल्ड चैंपियन और IPC चेयरपर्सन।

यह बिलकुल एक सपना था।

अस्फिया: शोधकर्ता हैं और भोपाल में रहती हैं। दुनिया को उन्हें शोधकर्ता के लेंस से देखना बहुत पसन्द है। इन दिनों कहानियाँ और लेख लिखने में अपना समय बिता रही हैं।

सभी चित्र: नरेश पासवान: बिहार के मिथिला में एक दलित परिवार में जन्मे नरेश, मधुबनी मिथिला शैली के एक स्व-शिक्षित चित्रकार हैं। उनकी चित्रकारी के लिए उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय पहचान भी मिली है। अमेरिका, ब्रिटेन और फ्रांस में उनकी कलाकृतियाँ नामित हुई हैं। उनकी चित्रकारी में हिन्दू पौराणिक कथाओं और राजा सलहेश की लोककथाओं के साथ-साथ प्रकृति और रोज़मर्रा की ज़िन्दगी के दृश्यों का चित्रण होता है। वर्तमान में, *एकलव्य* में एक फ़ेलोशिप पर हैं।

